सरोकारों में बुनियादी तौर कोई फर्क नज़र नहीं आता। सरोकारों की यही अभिन्नता भीष्म साहनी को प्रेमचन्द की परम्परा से जोड़ती है। प्रेमचन्द का साहित्य अगर आज भी हमारे लिए प्रासंगिक बना हुआ है तो इसका प्रमुख कारण उनके व्यापक मानवीय सरोकार ही हैं। जब तक समाज में गरीबी, भूख, शोषण, अन्याय, विषमता, धर्मान्धता एवं जाति के नाम पर भेदभाव बना रहेगा, तब तक प्रेमचन्द की प्रासंगिकता में कोई कमी नहीं आने पाएगी। कथाकार पंकज बिष्ट का कहना है कि ''आजादी के बाद तक प्रेमचन्द की वह परम्परा कायम थी जिसमें हमारे समाज में अल्पसंख्यक की उपस्थिति को हिन्दी में उन लेखकों ने रेखांकित करने का लगातार प्रयास किया था जो स्वयं अल्पसंख्यक नहीं थे। यशपाल और भीष्म साहनी इसके उदाहरण हैं।''(पंकज बिष्टः वागर्थ, जून 214, पृ.27) सिर्फ अल्पसंख्यक पात्रों का चित्रण कर देना अथवा ग्रामीण परिवेश में किसान जीवन की छवियाँ निर्मित कर देना प्रेमचन्द की परम्परा का पर्याय नहीं है। असल बात उस रचना-दृष्टि की है जिसे प्रेमचन्द ने अपने साहित्य का आधार बनाया है। यह बात सही है कि प्रेमचन्द के बाद कथा साहित्य में अल्पसंख्यक पात्रों की उपस्थिति लगातार कम होती गयी, फिर भी यह कहना अनुचित न होगा कि प्रेमचन्द की परम्परा बहुआयामी है और समकालीन रचनाधर्मिता उसके प्रभाव से पूरी तरह मुक्त नहीं है। भीष्म साहनी के साहित्य पर विचार करें तो उनके लेखन में सोद्देश्यता अथवा गहरे सामाजिक सरोकारों का समावेश और उसके प्रति सजगता स्पष्ट दिखायी देती है। कहने का अर्थ यह है कि भीष्म साहनी के लेखन में हमें एक ऐसी व्यापक दृष्टि की झलक मिलती है जिसमें मनुष्य और उसके समाज को प्रगतिशील, मानवीय, सुसंस्कृत, संवेदनशील एवं सुन्दर बनाने का सपना पल रहा होता है। बात सिर्फ़ सपनों तक ही सिमट कर नहीं रहती, वह आकांक्षा में बदलती हुई छटपटाहट तक जाती है; अर्थात् भीष्म साहनी भारतीय साहित्य के एक ऐसे रचनाकार हैं जिसमें मनुष्य और समाज को सुन्दर देखने की बेचैनी महसूस की जा सकती है। इसे जानने-समझने के लिए उनके साहित्य में बिखरे उन पात्रों, घटनाओं एवं प्रसंगों पर दृष्टिपात करना होगा जिन्हें उन्होंने बहुत जतन से गढ़ा है। 'तमस' का हरनाम सिंह और जरनैल सिंह, 'बसन्ती' की बसन्ती, 'मय्यादास की माड़ी' की रुक्मणी और लेखराज, 'चीफ़ की दावत' की बूढ़ी माँ, 'हानूश' का हानूश, 'कबिरा खड़ा बाजार में' नाटक के कबीर, 'माधवी' की माधवी जैसे पात्र हों अथवा 'तमस' में इत्रफरोश की हत्या, कुएँ में गिरकर स्त्रियों की सामूहिक आत्महत्या, इक़बाल सिंह के मुंह में हड्डी ठूंसने, छत पर भाग रही लड़की के साथ सामूहिक बलात्कार करने, 'अमृतसर आ गया है' में पठान को धक्का देकर रेल के डिब्बे से बाहर फेंकने, 'हानूश' में हानूश की आँखें निकाले जाने का आदेश, 'माधवी' में पिता द्वारा माधवी को दान दिये जाने जैसे प्रसंग भीष्म साहनी की गहरी संवेदनशीलता, व्यापक दृष्टि एवं छटपटाहट का साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं।

भीष्म साहनी का साहित्य हाशिये के लोगों की पीड़ा, शोषण, यातना और जीवन-संघर्ष से भरा हुआ है। इन हाशिये के लोगों में मजदूर, घरेलू नौकर-नौकरानियां और छोटे-छोटे काम करके जीवन-यापन करने वाले विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इन उपेक्षित पात्रों को अपनी रचनाओं में सम्मानजनक स्थान देकर भीष्म साहनी ने अपनी रचना-दृष्टि का परिचय दे दिया है। उनका उपन्यास 'बसन्ती' शहरी मजदूरों के बार-बार बसने-उजड़ने तथा यातनाएँ सहते जाने की विवशता को जिस संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत करता है, उसके आधार पर उनकी सर्जनात्मक दृष्टि का मूल्यांकन किया जा सकता है। उनकी रचनाओं में चित्रित हाशिये के लोगों के जीवन की अनेक विडम्बनात्मक स्थितियाँ राजनीति एवं समाज के विद्रूप को प्रभावशाली ढंग से सामने रख देती हैं। भीष्म साहनी के साहित्य में हाशिये के लोगों की पीड़ा की अभिव्यक्ति का उनकी विचारधारा से घनिष्ठ सम्बन्ध है।

"इन उपेक्षित पात्रों को अपनी रचनाओं में सम्मानजनक स्थान देकर भीष्म साहनी ने अपनी रचना–दृष्टि का परिचय दे दिया है। उनका उपन्यास 'बसन्ती' शहरी मजदूरों के बार–बार बसने–उजड़ने तथा यातनाएँ सहते जाने की विवशता को जिस संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत करता है, उसके आधार पर उनकी सर्जनात्मक दृष्टि का मूल्यांकन किया जा"